चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र
6

तरडोके नाम के गाँव में गोरा नाम का एक कुम्हार रहता था। वह बिट्ठल भगवान का बड़ा भारी भक्त था। चाहे जिस काम में लगा हो भगवान बिट्ठल का नाम जरूर जपता रहता था। धीरे-धीरे उसकी भक्ति की चर्चा फैलने लगी और दूर दूर से भक्त लोग उसके दर्शनार्थ आने लगे।

एक बार ऐसे ही भक्तों का एक दल उसके घर में आकर ठहरा। गोरा ने उनके स्वागत-सत्कार के लिए सब इन्तजाम किया। सब कुछ करने के बाद वह अपने आवाँ के पास गया और एक एक घड़े को निकाल कर ठोकने-बजाने लगा।

उस समय आए हुए भक्त लोग खा-पी कर आराम से सो रहे थे। लेकिन उस दल का एक भक्त जाग रहा था। वह गोरा के पास आकर बैठ गया और पूछने लगा-"क्यों जी। एक एक घड़े को यों ठोंक ठोंक कर क्यों बजा रहे हो!"

"घड़े अच्छी तरह पक गए कि नहीं; यही देख रहा हूँ। अगर कोई कच्चा रह गया तो उसे आवाँ में डाल कर फिर से पकाऊँगा।" गोरा ने जवाब दिया।

तब उस भक्त ने कहा-"महाराज! हम लोग जो यहाँ आए हुए हैं, सभी कच्चे घड़े ही हैं। हम में भी बहुत कच्चाई रह गई है। इसलिए हमें भी ठोको बजाओ। हमें भी ज्ञान की भट्टी में तपाओ। उस भक्त ने गोरा से प्रार्थना की।

यह सुन कर गोरा ने कहा-"माई! इन भक्तों में शायद कोई ज्ञान पूर्ण नहीं हो पाया है। शायद उन पर कृपा करने के लिए भगवान ने तुम्हारे मुँह से यह बात निकाली है। चलो ! में आता हूँ। देखूँ तो वह कच्चा घड़ा कौन है !" यह कह कर गोरा हाथ में थापी लिए ही अन्दर आ गया।

नारायण प्रसाद

लेकिन नामदेव सो कोई मामूली आदमी नहीं था। वह तो जन्म से ही भगवान बिट्ठल का नाम जपने लगा था। और आज तक पह भगवान की सेवा में ही अपनी जिन्दगी बिताता आ रहा था। सो उसी को गोरा ने कह दिया "कच्चा घड़ा"। क्या यह उचित हुआ ! उस भक्त को बड़ी लज्जा हुई। वह मुँह अधेरे उठा और सीधे पण्डरीपुर चला गया। वहाँ पहुँचते ही वह भगवान के पैरों पर गिर पड़ा और कहने लगा- "देवाधिदेव ! गोरा ने मेरा भारी अपमान किया। सबों के सामने उसने कह दिया कि में कच्चा घड़ा हूँ। मेरा इतना बड़ा अपमान हो जाए और प्रभो, तुम चुप रह जाओ। तुम्हारे लिए क्या यही उचित है !" यह कह कर नामदेव आँसू बहाने लगा। इस पर भगवान मुस्कुराए और बोले -"नामदेव ! इसमें तुम्हारा अपमान तो कुछ नहीं हुआ। बात तो सच्ची है। तुम तो अमी कच्चे घड़े ही हो। तुम्हें अभी पूरा ज्ञान प्राप्त कहाँ हुआ!" "अगर उसने जो कहा, वही ठीक है तो मुझे पक्का बना दो प्रभो।" नामदेव ने क्षोभ से भर कर कहा।

तब तक भक्तों की आँखें खुल चुकी थी और वे अङ्गड़ाइयाँ ले रहे थे। आते ही गोरा ने एक-एक का सिर उस थापी से ठोक-बजा कर देखा और चुपचाप लौट गया। सभी भक्तों ने यह मार चुपचाप सह ली। कोई कुछ नहीं बोला। सबसे आखिर में नामदेव थे। उन्होंने टोका-"गोरा। यह क्या कर रहे हो? हम लोग तुम्हारे अतिथि हैं। हमें यों क्यों पीट रहे हो?"

बस, गोरा चिल्ला उठा-"देखो, यही कच्चा घड़ा है।" ऐसा कह कर वह फिर अपने आवाँ के पास चला गया।

इस पर भगवान ने कहा-"किसी गुरु की शरण लिए बिना तुम पक्के नहीं हो सकते हो, नामदेव ! जाओ! भगवान नागनाथ के मन्दिर में बीसोबा नाम के महाभक्त रहते हैं। तुम कुछ दिन उनकी सेवा में दास बन कर रहो। तब कच्चे घड़े नहीं रहोगे।"

भगवान की आज्ञा के अनुसार नामदेव नागनाथ के मन्दिर में गया। वहाँ जाकर जब उसने पूछ-ताछ की तो पता चला कि बीसोबा भगवान के पास हैं। नामदेव ने मन्दिर में जाकर देखा। यह क्या! बीसोबा लिङ्ग रूप भगवान पर दोनों पैर रख कर मजे में खर्राटे ले रहे थे। नामदेव यह देख कर हक्का-बक्का रह गया। उसने सोचा-"क्या इसी नालायक का चेला बनना है मुझे !" आखिर जब उससे न देखा गया तो उसने थपकी देकर बीसोबा को जगा दिया और पूछा-"यह तुम क्या अनर्थ कर रहे थे भक्तवर !"

बीसोबा ने आँखें मलते हुए कहा-"बेटा! शायद नींद में मेरे पैर उधर चले गए होंगे। बूढ़ा हो गया हूँ न। मेरे पास तो पैर हिलाने की भी ताकत नहीं रह गई है। इसलिए जरा तुम्हीं मेरे पैर वहाँ से हटा कर नीचे रख दो।"

तब नामदेव ने भी बीसोबा के दोनों पैर भगवन के सिर पर से हटा कर नीचे रखना चाहा। लेकिन जाने कैसे, कहाँ से आ गया कि वहाँ भी उसे एक लिङ्ग दिखाई दिया। आश्चर्य से उसने पैरों को उठा कर दूसरी तरफ रखना चाहा। लेकिन उसे वहाँ भी एक लिङ्ग दिखाई दिया। उसने सोचा-"यह जगह तो लिङ्गों से भरी हुई है।" इसलिए वह बीसोबा को कन्धे पर उठा कर बाहर ले आया और बैठा दिया।

लेकिन वहाँ भी उसे लिङ्ग ही लिङ्ग दिखाई दिए। आखिर जब उसे कुछ सूझा नहीं तो उसने उसके दोनों पैर उठा कर अपने सिर पर रख लिए। लेकिन ज्योंही उनके पैर उसके सिर से लगे कि वह खुद एक लिङ्ग बन गया। "बाह ! मैं भी एक लिङ्ग बन गया। तो क्या सारे संसार में लिङ्ग ही लिङ्ग भरे हुए हैं।" उस लिङ्ग में से शब्द सुनाई दिए।

बीसोबा जो अब तक एक मरणासन्न बूढ़े की तरह पड़ा हुआ था, उठा और कहने लगा-" नामदेव ! आश्चर्य न करो ! सोचो, संसार में कोई ऐसी जगह है, जहाँ भगवान नहीं ! मैं तुमको यही बताना चाहता था। इसीलिए मैंने यह तमाशा दिखाया तुम्हें। इतने दिनों तक तुम सोच रहे थे कि एक पण्डरीपुर में ही बिट्ठल भगवन हैं। लेकिन यह तुम्हारा भ्रम था। वे तो सब जगह विद्यमान हैं। गोरा के घर में जो जो लोग ठोंके जाने पर चुप रह गए थे, वे सब यह जानते थे। उस थापी में भी उन सब ने भगवान को ही देखा। इसीलिए वे चुप रह गए। तुम्हारा ज्ञान अधूरा था। इसलिए तुम ने वैसा प्रश्न किया।"

यह सुन कर नामदेव ने हाथ जोड़कर कहा-"प्रभो ! आपका कहना सत्य है। मैंने सोचा कि गोरा ने 'कच्चा घड़ा' कह कर मेरा भारी अपमान किया। लेकिन अब समझ में आ गया कि उसका कहना बिलकुल सच था। मैं सचमुच कथा बड़ा हूँ।" "नामदेव ! अब तुम्हारा ज्ञान पूरा हो गया। जाओ ! मुझसे जो कुछ पाना था, तुमने पा लिया। अब तुम कच्चे घड़े नहीं हो!" यह कह कर बीसोवा ने फिर उसे पहले का रूप दे दिया और आशीर्वाद देकर भेज दिया।
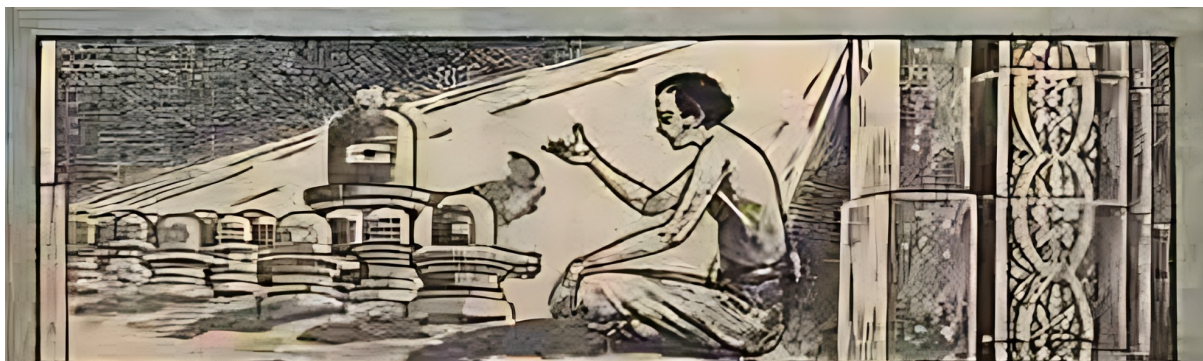
राजा और रानी ने बाग में पहुँच कर देखा कि तीनों लड़कियाँ बेहोश पड़ी हुई हैं। हाथ पैर ठण्डे पड़ गए हैं। साँस ठीक से नहीं चलती। वे दोनों बहुत घबरा गए और मन ही मन भगवान का नाम लेकर कुशल मनाने लगे। ये ध्यान में इतना मग्न हुए कि उन्हें दुनियाँ की बिस्कुन सुधि न रही।

अब राजवैद्य ने आकर राजा को पुकारा तब कहीं दोनों को होश आया। राजवैद्य ने लड़कियों की जाँच की और फिर चारों ओर नजर डाली। तब उसे नजदीक ही एक फल पड़ा हुआ दिखाई दिया। उस फल पर दाँतों की निशानियाँ थीं, जैसे किसी ने उस पर दाँत मारे हो। राज वैद्य ने उस फल को हाथ में लेकर सूँघा और कहा-"ओह! तो बात यह है ! यह फल जहरीला है। इस पर दाँत मारने के कारण ही तीनों लड़ाया बेहोश हो गई हैं। यह कह कर उसने अपनी जेब में से कोई दवा निकाली और बारी बारी से उन लड़कियों को सूँघा दी।

उस दवा के सूँघाने से लड़कियों को कुछ ज्यादा फायदा तो नहीं हुआ। हाँ, उनकी हालत और बिगड़ी नहीं। फिर वैद्य ने वह फल दासी को दिखाकर पूछा-

"जानती हो, यह फल यहाँ कहाँ से आ गया है ?"

दासी कहने लगी-"मैं रोज की तरह राजकुमारियों को सैर कराने ले आई। थोड़ी देर तक हम सभी इधर-उधर घूमती रहीं; आखिर इस पेड़ के नीचे आकर बैठ गई। इतने में कुमारियों ने कहा कि हमें प्यास लग रही है। पानी ला दो! मैं उन्हें यहाँ छोड़ कर गई और पानी लेके भाई तो देखा कि दो लड़कियाँ बेहोश पड़ी हुई हैं और छोटी बिटिया उस फल में दाँत लगा रही है। मैंने उससे पूछा कि वह फल कहाँ से आया। लेकिन जवाब देने के पहले ही यह भी बेहोश होकर गिर पड़ी। इसके अलावा में कुछ नहीं जानती।" दासी यह कह कर रुक गई।

तब राजवैद्य ने सिर उठा कर ऊपर देखा। उस पेड़ पर एक गिद्ध बैठा हुआ था। "हाँ, उस शैतान ने ही यह फल यहाँ ला गिराया होगा। देखते क्या हो-मार डालो उसे !" वैद्य ने कहा ।

वैद्य के इतना कहते ही एक सिपाही ने उस पर तीर का निशाना लगा दिया। पर निशाना चूक गया और वह गिद्ध न जाने, कहाँ गायब हो गया। इतने में दवा का प्रभाव पड़ा और वे तीनों लड़कियाँ जरा-जरा हिलने-डुलने लगीं। यह देख कर सब की जान में जान आई। थोड़ी देर बाद राजा-रानी तीनों लड़कियों और बैद्य के साथ महल में लौट आए।

वैद्य ने लड़कियों को एक बार और दवा दी। बस, अब की दवा लेते ही लड़कियाँ एकदम चङ्गी हो गई। अचरज तो यह कि इतनी देर बेहोश रहने पर भी वे लड़कियाँ बिकुल थकी हुई न जान पड़ती थीं। उनके मुँह पर अब पहले जैसा तेज लौट आया था।

यह देख कर राजा-रानी और वैद्य तीनों बहुत खुश हुए।

उस समय वे लड़कियाँ चार बरस की थी। अब राजा को निश्चय हो गया कि ज्योतिषी के कहे अनुसार और तीन बरस तक लड़कियों की जान हमेशा जोखिम में ही रहेगी। इसलिए अब वह सोचने लगा कि कैसे इन तीन बरसों तक उन लड़कियों की रक्षा की जाए !

एक दिन राजा अकेला बाग में टहल रहा था कि उसे एक जगह एक चट्टान दीख पड़ी। उस मट्टान पर लिखा हुआ था 'सुरङ्ग'। राजा ने जोर लगा कर उसे हटा दिया और देखा कि अन्दर जाने के लिए सीढ़ियों बनी हुई हैं। राजा सीढ़ियों से उतरता उतरता एक बड़े महल में जा पहुँचा। यह महल किसने बनवाया और क्यों बनवाया, जानने का कोई उपाय न था। मइल की दीवारे सङ्गमरमर की बनी हुई थीं। सहन में मणियाँ जड़ी हुई थीं। उस महल में ऐसी ऐसी कीमती चीजें थी कि देखते ही मालूम हो जाता था कि किसी राजा-महाराजा का बनवाया हुआ है।

राजा ने घूम-फिर कर यह सारा महल देखा और फिर ऊपर चला आया। उसने फिर चट्टान को खिसका कर सुरङ्गका मुँह बन्द कर दिया जिससे किसी को उसका रहस्य न मालूम हो। परन्तु इतने पर भी उसे सन्तोष न हुआ। तब उसने घास-फूस लाकर उसे अच्छी तरह ढँक दिया ताकि किसी की नजर उस पर न पड़े।

थोड़ी देर बाद राजा अपने महल को लौट आया। लेकिन उसने उस मुरङ्ग की बात रानी से नहीं कही। क्योंकि राजा नहीं चाहता था कि सुरङ्ग की बात किसी दूसरे को मालूम हो। राजकुमारियों की रक्षा की चिन्ता तो

उसे सता ही रही थी। अचानक उसे ध्यान आ गया कि क्यों न इसी में उन्हें रख दिया जाए। वह इसी उधेड़-बुन में पड़ गया।

सबसे पहले राजा ने उस सुरङ्ग-महल में इतनी रसद और खाने-पीने की चीजें जमा करवा दी कि एक सौ आदमियों के लिए तीन बरस तक काफी हो। उसने नौकरों द्वारा ये सब चीजें सुरङ्ग में पहुंचवाई। नौकर सभी विश्वास पात्र थे। फिर भी राजा ने उनको सुरङ्ग में ही बन्द कर दिया जिससे वे बाहर आकर किसी से कुछ कह न दें। गुप-चुप सारा इन्तजाम कर के राजा लोटा और तीनों लड़कियों और तीनों दासियों को साथ लेकर फिर बाग में चला गया। रानी ने सोचा कि राजा उन्हें टहलाने के लिए ले जा रहा है।

बाग में जाते ही राजा सीधे सुरङ्ग के पास पहुँचा और धीरे से चट्टान हटा कर खड़ा हो गया। यह देख कर दासियाँ और राजकुमारियाँ एकदम चकित हो उठीं। सब उत्सुकता से देखने लगीं।

राजा ने तीनों लड़कियों और दासियों को अन्दर उतरने को कहा। सकपकाती हुई
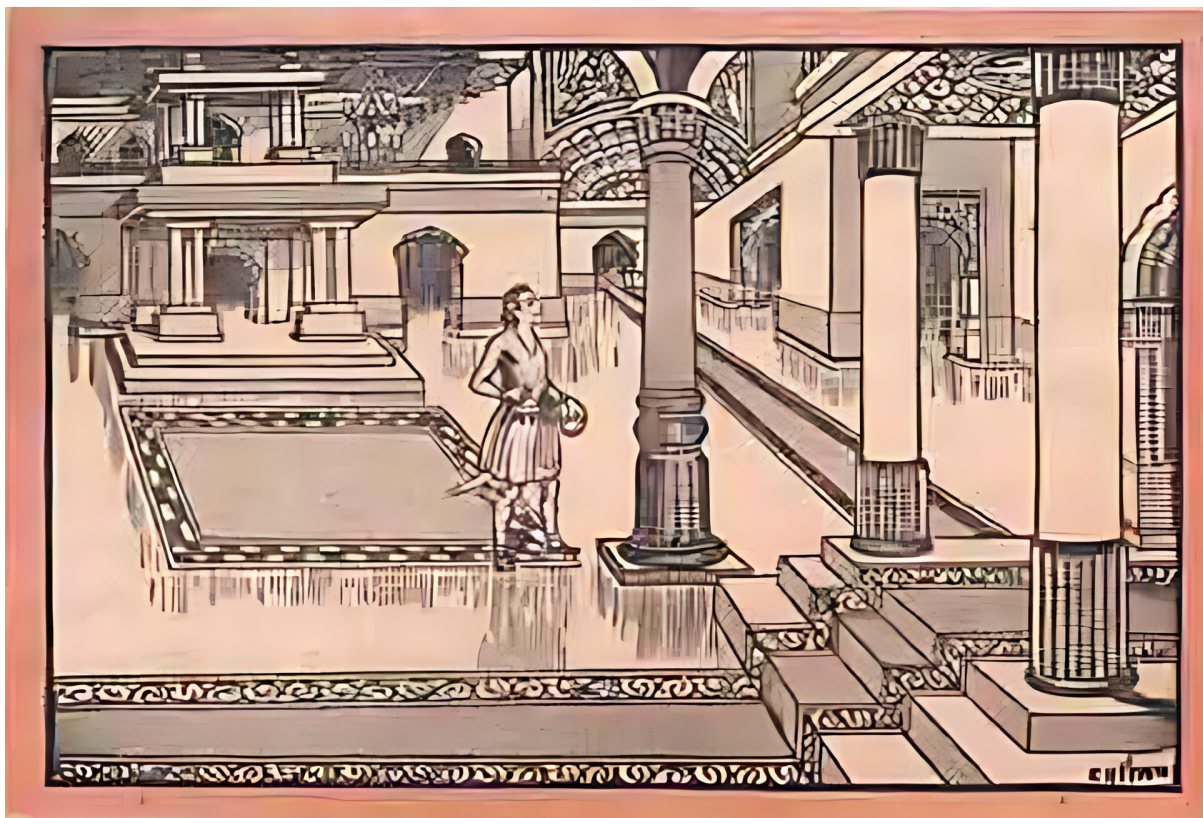
वे सब सुरङ्ग में घुसने लगीं। उनके पीछे पीछे राजा मी घुसा और चट्टान से सुरङ्ग का मुँह फिर बन्द कर दिया। घोर अन्धकार में एक एक सीढ़ी उतरते हुए दासियों को डर लगने लगा। उनकी समझ में न आ रहा था कि राजा उन्हें कहाँ ले जा रहा है। वे डर के मारे काँप रही थीं।

लेकिन राजा से कुछ पूछने की उनमें हिम्मत कहाँ थी ? क्या करतीं ! जान हथेली पर रख कर वे नीचे उतरी और डरती हस्ती महल में पहुँची। वहाँ पहुँच कर सबसे पहले उनकी नजर नौकरों पर पड़ी जो वहाँ पहले ही से बन्द थे। उन लोगों को देखते ही उन्हें कुछ धीरज हुआ।वे सब यह सोच कर चुप हो गई कि राजा ने कुछ सोच-विचार कर ही यह सब किया है।

राजा ने एक सौ नौकरों और तीन दासियों के हाथों में राजकुमारों को सौंप दिया और कहा-"तुम सब को मालूम है कि बहुत दिन तक निसन्तान रहने के बाद मेरी ये लड़कियाँ पैदा हुई। इनकी उमर अभी सिर्फ चार साल की है। तुम सभी जानते हो कि इन चार बरसों में

इनके प्रणों पर कैसे सङ्कट आए। ज्योतिषी के कहने के मुताबिक और तीन साल तक इन पर ऐसे ही सङ्कट आते रहेंगे। तीन बरस के बाद कोई डर न रहेगा।

इसलिए इनको मैं इस सुरङ्ग में ले आया हूँ और तुम्हारे हाथों में सौंपता हूँ। याद रखो, इस सुरङ्ग का रहस्य किसी को मालूम नहीं है। इसलिए यहाँ कोई नहीं आ सकता। आदमी की क्या बात, पञ्छी को भी पता नहीं लगेगा कि मेरी लड़कियों यहाँ बन्द हैं। और तो

और उनकी माँ रानी भी यह बात नहीं जानती।

मुझे डर है कि कोई दुष्ट शक्ति मेरी लड़कियों के पीछे पड़ गई है और इनके प्राण हर लेना चाहती है। इसलिए समझ लो, अगर कहीं उस दुष्ट शक्ति को किसी तरह मालूम हो गया कि मेरी लड़कियाँ यहाँ बन्द हैं तो बस इनकी खैर नहीं। इसलिए तुम सबका धर्म है कि यह बात किसी पर प्रकट न होने पाए। अगर किसी को मालूम हुआ तो यही समझा जाएगा कि या तो तुम लोगों ने बताया, या मैंने। मैंने सङ्कल्प किया है कि तीन बरस तक मैं यह बात अपनी जीभ पर भी न लाऊँगा। उसी तरह तुम्हें भी चुप्पी साथ कर लड़कियों की रक्षा करनी चाहिए। अगर इसके खिलाफ कुछ हुआ तो समझ लो, किसी को जीता नहीं छोड़ूँगा। अगर तीन बरस सकुशल बीत गए तो मैं तुम सब को बहुत बड़ा इनाम दूँगा। तुम सबके लिए तीन साल के वास्ते सब कुछ यहाँ है। इसलिए तुम सब जैसे महल में रहते थे, उसी तरह यहीं भी सुख से रहो। तुमको कभी किसी चीज़ की कमी न होगी। अगर मेरी लड़कियों को किसी चीज की जरूरत हो, तो तुरन्त मुझसे आकर कहो। वह चीज़ जुटा दी जाएगी। में बीच-बीच में आकर तुम लोगों की खोज-खबर लेता रहूँगा। बोलो, याद रहेंगी न ? अच्छा ! तो अब मैं जाऊँ ?" राजा ने पूछा।

दास-दासी पहले तो सहमे बैठे थे। लेकिन राजा की ये बातें सुनकर सबके चेहरे चमक उठे। "पहले कारण मालूम न था। इसलिए हम डर गए थे। अब सारी बात समझ में आ गई। आप कोई चिन्ता न करें। हमें
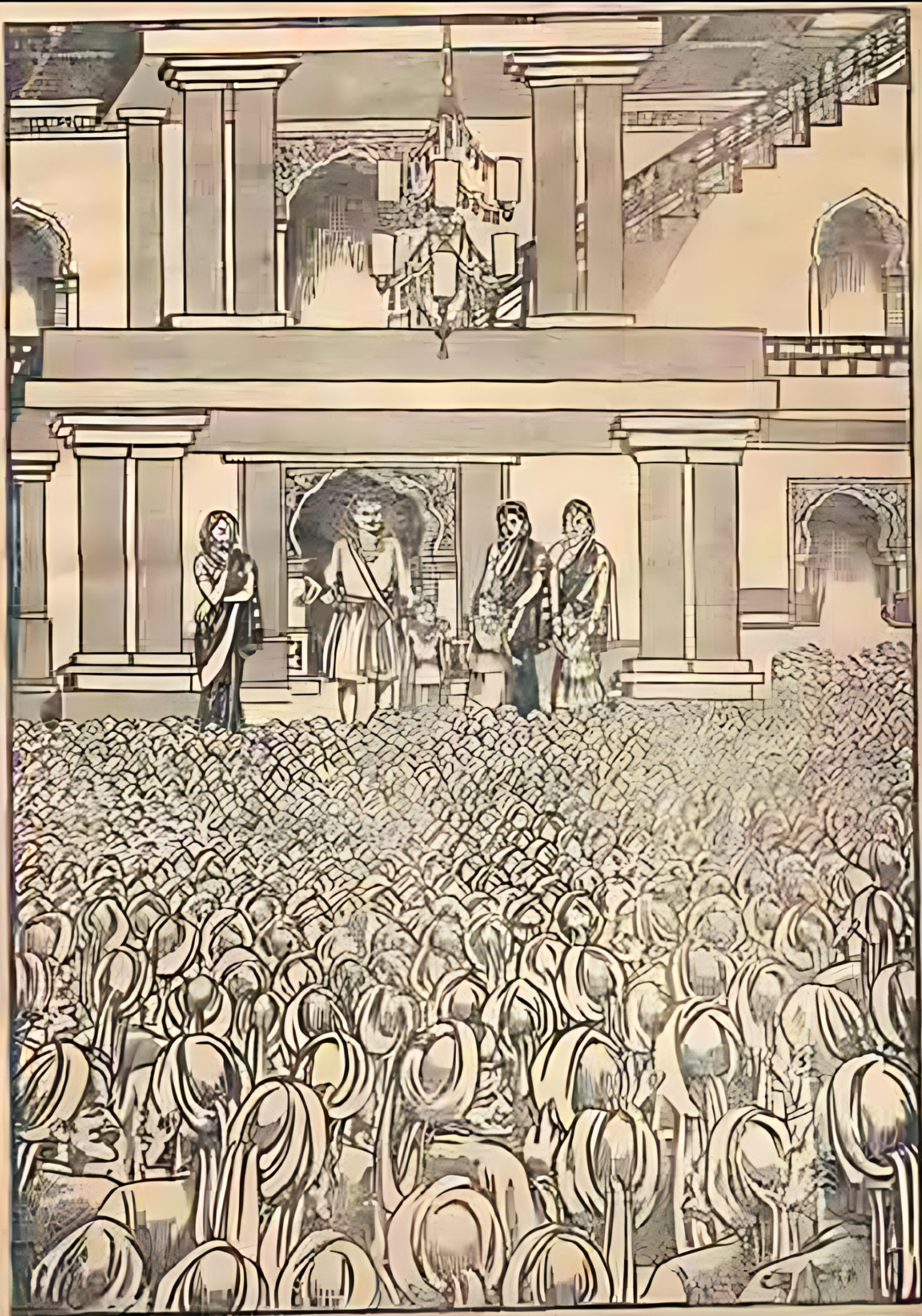
मालूम है कि राजकुमारियों की रक्षा किस तरह करनी चाहिए। यह तो हमारा पवित्र कर्तव्य है। पाण देकर भी हम अपना यह कर्तव्य पूरा करेंगे। आप निश्चिन्त हो जाइए। सिर्फ एक शङ्का हमारे मन को मथ रही है। आपने अभी कहा कि रानी को भी इस का पता नहीं है। रानी ने आपके साथ कड़कियों को आते देखा ही होगा। लोटने पर क्या वे पूछेंगी नहीं कि लड़कियाँ कहाँ है ? फिर उन्हें क्या जवाब देगे !" उन्होंने कहा।

"उसका जवाब में सोच लूँगा। तुम लोग यहाँ हमेशा सावधान रहना।" यह कह कर राजा बाहर निकल आया।

वहाँ रानी की जो हालत हो रही थी, उसका क्या कहना ! बहुत देर बीत जाने पर भी जब राजा राजकुमारियों को लेकर न लौटे, हब रानी घबराने लगी। जाने, जब कौन सी आफत आई उन पर !

धीरे धीरे उसकी व्याकुलता बढ़ने लगी। इतने में उसने देखा कि जोर जोर से रोते हुए राजा अकेला आ रहा है।

राजा की यह हालत देखते ही रानी के होश उड़ गए। वह पर कटे पञ्छी की तरह सुध-बुध खोकर घड़ाम से धरती पर गिर पड़ी।

[तीनों लड़कियों को हिफाजत से सुरङ्ग में पहुँचा राजा राजमहल की तरफ रोते हुए क्यों लौटा ? इसमें क्या रहस्य छिपा हुआ था? आदि बात अगले महीने पढ़िए।]

अनन्तपूर जिले में 'बुक्कराय समुद्र' नाम का एक गाँव है। उस गाँव में एक बहुत बड़ा तालाब है। एक साल उस जिले में पानी बहुत ज्यादा बरसा। जब दिन-रात लगातार पानी बरसने लगा तो वहाँ के लोग घबरा गए और सोचने लगे-"कहीं प्रलय तो नहीं आ गया!" वे इन्द्रदेव की दया की याचना करने लगे और पानी थमने की राह देखने लगे। इतना पानी पड़ने के कारण गाँव का तालाब लबालब भर आया। यह देख कर गाँव वालों की निन्ता और भी बढ़ गई।

'कहीं तालाब का बाँध टूट गया तब हम क्या करेंगे ? तब तो सिर्फ हमारा गाँव ही नहीं, आस-पास के गाँव भी यह जाएँगे। अगर ऐसा अन्धेर हुआ तो हमारे घर-बार गाय-गोठ, बाल-बच्चे सब कहाँ जाएँगे ! हम पैर कहाँ रखेंगे? कौन जाने कितने परिवार नष्ट हो जाएँगे। भगवान! हमने कौन सा पाप किया है जिसका यह दण्ड हमें दे रहे हो !" यह कह कर वे बहुत विलाप करने लो। उस प्रदेश के लोग इस तरह दुख में डूब रहे थे कि बादल गड़गड़ा उठे और उन्हें आकाश वाणी सुनाई पड़ी-"ऐ मनुष्यो ! तुम्हारे गाँव में 'बुढ़िया'

नाम की जो पतित्रता है, उसका अगर बलिदान करोगे तो यह बारिश रुक जाएगी और तुम्हारे लिए से यह साफत टल जाएगी।"

गाँव वालों ने यह साफ साफ सुना। ये कठोर बचन सुनते ही उनका हृदय एक बार शिहर उठा। क्योंकि वह बुढ़िया वास्तव में बुढ़िया नहीं थी। यह युवती थी। उसका नाम ही था बुढ़िया। बुढ़िया बड़ी पतिब्रता

एम. रमणी

थी। पतिब्रता ही नहीं, वह बड़ी सुन्दरी भी थी। वह अपने सास-ससुर की बड़ी सेवा करती थी और पति के ऊपर उसका अपार प्रेम था। इसके अलावा उसका हृदय बहुत ही निश्छल और उदार था।

गाँव के सभी लोग उसे बहुत मानते थे। इसी से यह आकाशवाणी सुनते ही सभी सोच में डूब गए। क्या वे अपने स्वार्थ के लिए ऐसी पतिब्रता का दान कर दें ? सारे गाँव में सनसनी फैल गई। लोग सभी आपस में कानाफूसी करने लगे।

लेकिन वह औरत जिसके कारण यह खलबली मची हुई थी, बिलकुल नहीं घबराई।

गाँव के बड़े-बूढ़े पुराने बरगद के पेड़ के नीचे जमा होकर सलाह-मशवरा कर रहे थे। बुढ़िया वहाँ आ पहुँची। आते ही वह कहने लगी- "आप लोग क्यों इतनी चिन्ता करते हैं! जो पैदा होता है उसे एक न एक दिन मरना ही पड़ता है। यह कठोर सत्य हमारी आँखों से कभी ओझल नहीं होता। फिर मृत्यु से डरने की क्या जरूरत है ! हमारी तकदीर में जितने समय तक जीना लिखा है, हम जिएँगे। उसके बाद लाख सिर मारने पर भी हम मृत्यु से पिण्ड नहीं छुड़ा सकते। इसलिए हरेक आदमी का कर्तव्य है कि वह ईश्वर का नाम लेता रहे और समय आते ही उसकी चरण-सेवा में जाने के लिए तैयार हो जाए। जाते समय हमें खुशी खुशी जाना चाहिए। क्योंकि हम यहीं अपनी खुशी से नहीं आए हैं। यह जीवन में दूसरे जीवन के लिए एक सीढ़ी है।

इसलिए हमें चाहिए कि जितने दिन यहाँ रहे अच्छे अच्छे काम करें और बुलावा आते

ही यहाँ से चल देने को तैयार हो जाएँ। यही नहीं, जिन्दगी की प्यास कभी बुझने बाली नहीं है। आदमी अगर लाख बरस जिए तो भी उसे सन्तोष नहीं होने का। इसलिए बड़ों का कहना है कि कौआ बन कर लाख बरस जीने की अपेक्षा हंस बन कर कुछ ही महीने जीना ही अच्छा है। मेरे लिए जो यह बुलावा आया है वह तो बड़ी खुशी की बात है। मुझे मुक्ति का रास्ता मिल गया। इतने लोगों की भलाई के लिए बलिदान देना, इससे बड़ा और क्या पुण्य कार्य हो सकता है ! ऐसा अच्छा अवसर बड़े भाग्य से मिलता है। ऐसी मौत जिन्दगी से बहुत श्रेयस्कर है। इसलिए आप मेरे बारे में कोई सोच न करें।" उसने कहा।

उसकी ऐसी साहस भरी बातें सुन कर बड़े-बूढ़े सभी दङ्ग रह गए। यह खबर धरे धीरे जब उसके सास-ससुर के कानों में पहुँची तो उन्होंने कहा-"बिटिया ! तुम मामूली औरत नहीं हो। तुम कोई देवी हो। तुम नहीं रहोगी तो हम एक पल भी नहीं जी सकते। तुम हमें छोड़ कर न जाओ!" वे उसे गले लगा कर रोने लग गए।

उसका पति भी गिड़गिड़ाने और आँसू बहाने लगा। लेकिन उनके बहुत कहने-सुनने पर भी बुढ़िया का सङ्कल्प न बदला। रिश्तेदारों के बहुत गिड़गिड़ाने पर भी, पति के बहुत रोने पर भी वह बिलकुल बिचलित न हुई ! "मेरे प्राण जाएँगे तो जाएँ ! इतने लोगों के प्राण तो बच जाएँगे ! इतने लोग अगर काल के गाल में चले गए तो एक मैं बच कर क्या करूँगी। शास्त्र और पुराण कहते हैं कि संसार में जो परोपकार के लिए बलिदान देता है, उसी का जीवन धन्य होता है। मेरी सबसे बड़ी इच्छा है कि मेरे इस तुच्छ जीवन से किसी का लाभ हो।

यही मेरे लिए सबसे बड़ा आनन्द होगा।" उसने अपने मन का दृढ़ निश्चय उन्हें बता दिया।

इस तरह सबों का समाधान करके बुढ़िया ने अपने बाल सवारे। माङ्ग में सिन्दूर लगाया। ललाट पर बिन्दी लगाई और कुसुमी कपड़े पहन कर गाजे-बाजे के साथ तालाब की ओर चली।

यहाँ पहले से ही बहुत लोग जमा थे। लेकिन सबके मुख पर उदासी छाई हुई थी। लोग ऐसे निस्तब्ध थे कि जोर से साँस भी नहीं लेते थे। उस सन्नाटे में सबकी आँखें बुढ़िया के सुकराते चेहरे पर गड़ी थीं। सब लोग उसका अपूर्व त्याग देख कर महान विस्मय में पड़े हुए थे।

उसी समय बुढ़िया प्रशान्त और तेज भरे मुख-मण्डल के साथ देवी की तरह तालाब के किनारे आ खड़ी हुई। उसने भक्ति-पूर्वक सास-सपुर के चरण छुए। जमा हुए गुरुजनों को प्रणाम किया। फिर पति के चरणों में माथा टेक कर बोली-"आशीर्वाद दीजिए। बिदा होती हूँ।"

जाती हुई नव-वधू के समान उसने सबका आशीर्वाद लिया। एक बार उसने सिर उठा कर आसमान की ओर देखा और फिर आँख मूँद ली। अग्नि में प्रवेश करती सीता की तरह, फाँसी पर उछल कर चढ़ने वाले शहीद की तरह वह बीर-नारी उस तालाब में कूद पड़ी और देखते-देखते बिलीन हो गई।

लोग कहते हैं कि आकाशवाणी के अनुसार उसके बलिदान होते ही बारिश रुक गई। आज भी लोग उस तालाब को "बुढ़िया का तालाब" कहते हैं। आस-पास के लोग अब तक उसकी याद में हर साल उत्सव मनाते हैं और एक देवी की तरह उसकी पूजा करते हैं। उस सती का बलिदान आज भी लोगों के हृदय में अङ्कित है।

कपिलेश्वर में उमाराज जी नामक एक धनी आदमी थे। उनकी पत्नी का नाम था उमा देवी। इन दोनों को किसी चीज की कमी न थी। उनके पाँच लड़के थे जो लाड़-प्यार से पल कर बड़े हो गए थे। पाँचों बेटों के व्याह भी हो गए थे। वे सुख से जीवन बिता रहे थे।

पाँचों बहुओं में चार के मैके वाले धनी आदमी न थे। लेकिन सबसे छोटी बहू सावित्री एक बड़े अफसर की लड़की थी। इसलिए उसे सास भौजाइयाँ बड़े प्रेम से देखती थीं।

"उमाराज की छोटी बहू कितनी खूबसूरत है ! और वह एक बड़े अफसर की लड़की भी है।" आस-पड़ोस की औरतें आपस में कहा करती थी।

उसकी चर्चा धीरे-धीरे सारे गाँव में होने लगी और गाँव के सबसे बड़े महल में रहने वाली बनजा देवी के कानों में भी पड़ी। बनजा कोई मामूली औरत न थी। वह भी एक बड़े धनवान की लड़की थी। उस पर जमीन्दार साहब की पत्नी। बनजा देवी के मन हुआ कि चल कर जरा देखें तो वह सावित्री कैसी है !

वह एक दिन उमा देवी के घर गई। उसे अपने घर आते देख उमा देवी गर्व से फूल उठी। क्योंकि जमींदार की गृहिणी कहीं आती-जाती न थी। उमा देवी ने उसकी खातिर में कोई कसर न होने दी। अन्त में उन्हें पान देने का अवसर पड़ा। बनजा देवी जैसी अमीर के घर की बहू को सोने की तश्तरी में न सही कम से कम चाँदी की तश्तरी में तो पान देना था! नहीं तो उमा देवी का स्तर न उतर जाता ?

इसलिए अब वह सोच में पड़ गई। आखिर कुछ सोच कर उसने ऊँचे स्वर में

भर्राए हुए गले से कहा-"तो क्या हो गई वह चाँदी की तश्तरी? खो गई?"

"ओह! उस तश्तरी पर सोने का कितना सुन्दर काम किया हुआ था!" बड़ी बहू ने अफसोस के साथ कहा।

"सोने की बात तो अलग! उस पर बेल-बूटे कितने सुन्दर बने हुए थे ? ऐसी कारीगरी थी कि देख कर आँख हटती नहीं थी।" दूसरी बहू ने तश्तरी की याद करके कहा।

"सिर्फ बेल-बूटे ही नहीं। वह थाली चनकती कैसी थी ? क्या और कोई कारीगर उस तरह चमका सकता है ?" तीसरी बहू ने चुनौती देते हुए कहा।

"हाय ! हाय ! इस वर्णन की जरूरत ही क्या है ? हमारी तश्तरी का मुकाबला ही नहीं। जो हमारे घर आते उस तश्तरी को को देखते ही कहने लगते थे-'हम भी एक बैसी ही तश्तरी बनाएँगे।' लेकिन क्या कोई बैसी तश्तरी बनवा सका !" चोथी बहू ने सुर मिलाया।

"हाय! उसके बीचों बीच जो हीरा जड़ा हुआ था, उसी के कारण उसकी कीमत दो हजार पाँच सौ तक हो गई थी ऐसी तश्तरी अब फिर कहाँ मिलेगी !" उमा देवी ने फिर माथा ठोंकते हुए कहा।

इस तरह सास-बहुएँ आधे घण्टे तक उस खोई हुई तश्तरी का गीत गाती रहीं। बनजा देवी और कब तक यह गीत सुनती। जम्हाई लेकर वह उठ खड़ी हुई।

उसे उठते देख कर उमा देवी पास आकर बोली-"हाय ! हाय ! मैंने आपको कितनी देर तक रोके रखा। तश्तरी की चिन्ता में आपको भूल ही गई थी।" यह कह कर उसने माफी माँगी।

"कोई बात नहीं काकी। तो मैं अब बिदा लेती हूँ।" बनजा देवी ने कहा।

"हाय ! हाय ! तो पान लिए बिना ही चली जाओगी? बच्चों ने तश्तरी कहीं खो दी। बड़ी अच्छी तश्तरी थी। दो हजार पाँच सौ रुपए की........ यों यह और भी कुछ कहने जा रही थी कि बनजा ने उन्हें टोक कर कहा- "क्या जरूरत है तश्तरी की ? पान मेरे हाथ में दे दीजिए न ! में तो कोई और नहीं हूँ।"

"खूब कहा तुमने ! मुझे तो यह सूझी ही नहीं थी। लेकिन सुनो, आज तश्तरी खो गई। कल और कुछ खो जाएगा। इस तरह रोज कुछ न कुछ..." उमा देवी ने मुँह फुला कर कहा।

"खो कहाँ जाएगी काकी? आपका घर तो सामान से भरा है। लड़के कहीं रख कर भूल गए होंगे। किसकी मजाल है कि आपके घर से कोई तिनका भी उठा ले जाए, जब कि आप दिन रात बाघिन की तरह पहरा देती रहती हैं।" बनजा ने उन्हें ढाढस बँधाते हुए कहा।

"तुम भी सच ही कहती हो। घर में एक लड़की है। लेकिन वह दस साल से काम कर रही है। अब तक उसने कानी कौड़ी भी कभी अपने हाथ से नहीं छुई।" उमा देवी ने कहा।

"आप घबराइए नहीं काकी ! तश्तरी कहीं मिल ही जाएगी। मैं जब तक फिर आपके घर आऊँगी तब तक सावित्री के पिता चाँदी की कौन कहे, सोने की ही तश्तरी बनवा कर भिजवा देंगे। तब तक कोई पीतल की तश्तरी काम में लाइए! में तो कोई गैर नहीं हूँ!" बनजा ने कहा ।

तब कहीं उमा देवी को सन्तोष हुआ और उन्होंने पीतल की हश्तरी में रख कर उसे पान दिया। और थेड़ी देर तक बातें होती रहीं। आखिर बनजा जाते जाते उनसे

रविवार को अपने घर जाने का अनुरोध करती गई।

रविवार को उमा देवी बनजा के घर जाना तो चाहती थी। लेकिन जब कोई जरूरी काम आ पड़ा तो उसने अपने बदले बड़ी बहू को भेज दिया।

ज्योंही बड़ी बहू सीता उसके घर पहुँची, त्यों ही बनजा ने बड़ी उत्सुकता से पूछा-"क्यों सीता! उस दिन तुम्हारी चाँदी की तश्तरी खो गई थी, मिली ?"

"अभी मिली नहीं, लेकिन एक महीने के अन्दर जरूर मिल जाएगी।" सीता ने हँसते हुए कहा।

लेकिन यह बनजा की समझ में न आया और उसने वही सवाल दुहराया।

तब सीता ने कहा-"हमारे तो चाँदी की तश्तरी थी ही नहीं, फिर वह खो कैसे जाती ?"

"वाह ! यह तो खूब रही ! तब तुम्हारी सास ने क्यों सारा घर अपने सर पर उठा लिया उस दिन ?" बनजा ने अचरज के साथ पूछा।

"वह सब तो सिर्फ एक बहाना था ! नहीं तो तुम्हारे सामने हमारी हेठी न हो जाती ? लेकिन अब आगे से इसकी जरूरत न होगी। क्योंकि सावित्री के पिता ने लिखा है कि वह एक महीने में एक चाँदी की तश्तरी बनवा कर भेज रहे हैं। इसलिए अब आगे से हम सबको यह स्वाँग करने की जरूरत न होगी।" सीता ने अपने घर का मेद खोल दिया।

"संसार में कैसे कैसे अजीब आदमी रहते हैं। मैंने बड़ी भूल की जो तुम्हारे घर आकर तुम सबको इतना कष्ट दिया।" बनजा ने नाक पर उँगली धर कर कहा।

"आप ऐसा न सोचिए जी। आप हमारे घर आई, तभी तो आपके पुण्य से हमें एक चाँदी की तश्तरी मिल रही है।" सीता ने जवाब दिया।
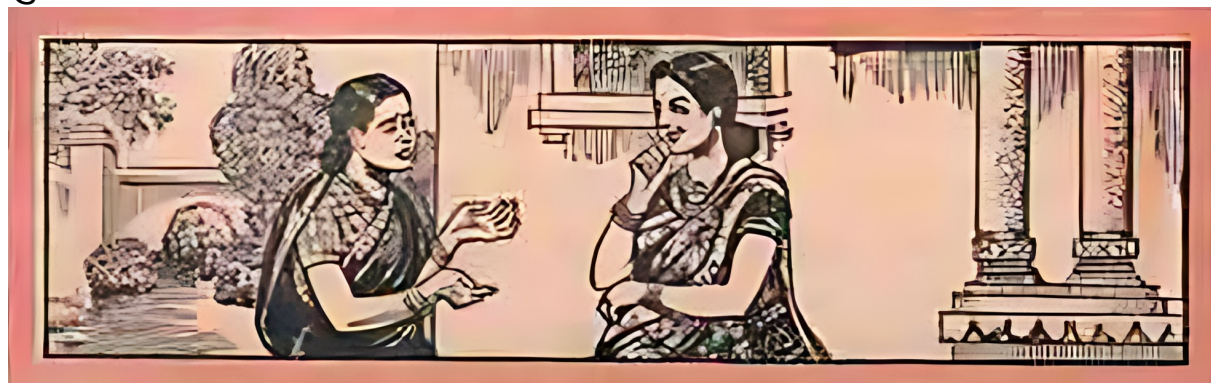
गोदावरी के किनारे द्राक्षाराम नाम का एक पुराना गाँव है। किसी समय उस गाँव मैं भीमकवि नाम का कवीश्वर रहता था। द्राक्षाराम में भीमेश्वर का एक मन्दिर है। भीमेश्वर की कृपा से उस कवि का जन्म हुआ था। इसी से उसका नाम भीमकवि पड़ गया। भीमकवि बड़ा भक्त था। भगवान की कृपा से उसमें कुछ अद्‌भुत शक्तियाँ आ गई थीं। कहा जाता है कि उन शक्तियों के प्रभाव से वह अपने दुश्मनों को जीत कर बड़ा बन गया। उसकी सबसे बड़ी शक्ति उसका अमोघ वचन था। उसके मुँह से जो बात निकलती थी वह होकर ही रहती थी। इस तरह अपनी प्रतिभा के बल से अनेक राज दरबारों में विजय का डङ्का बजा कर भीमकवि ने अनेक राजाओं से बहुमूल्य पुरस्कार पाए।

एक बार घूमते घूमते वह कलिङ्ग के गङ्ग नामक राजा के दरबार में पहुँचा। "कह दो कि भीमकवि हुजूर के दर्शन के लिए आया है और हुजूर की इजाज़त की राह देख रहा है।" कवि ने द्वारपाल के जरिए कहला भेजा।

थोड़ी देर बाद उस द्वारपाल ने लौट कर कहा-"महाराज अभी जरूरी काम में लगे हुए हैं। इसलिए कहा है कि अभी आपको दर्शन नहीं दिया जा सकता।"

यह सुनते ही भीमकवि आग-बबूला हो उठा। वह जरा क्रोधी और सनकी आदमी था। फिर यह जवाब सुन कर उसके क्रोध का क्या कहना था ! "ओहो! तो इस राजा को इतना घमण्ड हो गया है। मेरे जैसा कवीश्वर खुद उससे मिलने आए और वह मिलने से इन्कार कर दे। बेचारे को न जाने, काम में

कितना खटना पड़ रहा है। कोई हर्ज नहीं, जाकर कह दे कि कुछ दिनों में उसे खूब फुरसत मिल जाएगी।" यह कह कर कवि तमक कर वहाँ से चला गया।

कवि के कहने के कुछ ही दिन बाद उस राजा के राज में उथल-पुथल मच गई। उसके मन्त्रीगण उसके विरुद्ध षड़यन्त्र रचने लगे। उसके अफसर भारी घूसखोर बन गए। उसके सिपहसालार बगबन करने की सोचने लगे। साथ-साथ उस राजा की बेखवरी बढ़ गई। ऐसी हालत में उसके दुश्मन चुप क्यों बैठे रहते ?

पड़ोस के राजा ने जो उसका दुश्मन था यह हालत जान ली। उसने एक बड़ी सेना लेकर चढ़ाई कर दी और बड़ी आसानी से उसके राज्य पर कब्जा कर लिया।

अब वह राजा बेचारा क्या कर सकता था ? उसने रानी और राजकुमारों को मायके भेज दिया और खुद जान बचा कर कहीं भाग गया। उसके पकड़े जाने पर प्राणों की कोई आशा न थी। इसलिए वह बेष और नाम बदल कर दूर परदेश में भटकने लगा।

दुश्मनों ने अपने जासूसों द्वारा बहुत दिन तक उसकी खोज कराई। लेकिन कहीं उसका पता न चला तो वे हार मान बैठे। उन्होंने समझ लिया कि अब तक वह कहीं न कहीं मर गया होगा। यह सोचकर वे निश्चिन्त होकर राज करने लगे और उसकी याद भी भूल गए।

इधर बेचारा राजा भीख माँग कर पेट भरता हुआ, पेड़ों के नीचे रात काटता हुआ गाँव गाँव घूम रहा था। दिन पहाड़ों की तरह कट रहे थे और उसे कोई सूरत नजर न

आती थी। इस तरह वह घुमते हुए एक दिन एक शहर में पहुँचा और रात काटने के लिए एक सराय की ओर जाने लगा। थोड़ी ही देर पहले वहाँ पानी बरस गया था। इसलिए राजा का पैर फिसला और वह एक गढ़े में जा गिरा। उसने उसाँस लेकर कहा-"हाय हाय! जिसके इशारे पर एक साम्राज्य नाचता था आज अन्धेरे में उसे राह दिखाने वाला भी कोई नहीं है।" किसी तरह धीरे धीरे वह उठा और गढ़े से बाहर निकला।

उसी समय एक अजनबी उसी राह से जा रहा था। उसके कनो में राजा की ये बातें पड़ी। उसने पूछा-"भाई ! तुम कौन हो। कहाँ से आए हो !"

"मैं भीमकवि का मारा एक भिखारी हूँ।" राजा ने जवाब दिया।

यह सुनकर अजनबी ने कहा-"तो तुम्ही राजा गङ्ग हो ? अच्छा, भीमकवि में ही हूँ। तुम्हारी हलत देख कर मुझे बड़ा अफसोस होता है। जो हो गया, सो हो गया। जाओ तुम्हें क्षमा करता हूँ। अगली पूनम

तक तुम्हारा राज्य तुम्हें मिल जाएगा। चिन्ता करने की कोई बात नहीं।" यह कह कर उसने अपना शाप लौटा लिया और आशीर्वाद देकर राजा को वहीं से भेज दिया।

राजा जानता था कि कवि के मुँह से निकली बात कभी झूठी नहीं होती। फिर भी खोया हुआ राज पाना क्या कोई आसान काम था ! राजा को फिर से जीतने के लिए कितनी बड़ी सेना चाहिए थी। उस सेना के लिए कितना रुपया चाहिए। लेकिन उसका हाथ तो बिलकुल खाली था। उसके सङ्गो-

साथी भी कोई नहीं थे। हाथी-घोड़े, सिपाहियों और मददगारों के बिना वह कैसे राज पा सकता था ? जो हाथ जोड़ कर बैठा रहे वह कैसे जीत सकेगा? यह तो बिलकुल असम्भव था। "जान पड़ता है, कवि ने सिर्फ मुझे ढाँढस बँधाने के लिए ऐसा कह दिया। नहीं तो राजा कैसे बन सकूँगा मैं ?" राजा सोचने लगा।

यों निराश होकर राजा एक गाँव से दूसरे गाँव का चक्कर लगाते पूनम के एक दो दिन पहले ही राजधानी के पास के एक गाँव में पहुँच गया। राजा जिस समय उस गाँव में पहुँचा उस समय पेड़ के नीचे एक तमाशा हो रहा था। उसने देखा कि बहुत से लोग नाटक खेलने के लिए जमा हैं।

"सब कुछ ठीक है। सारा इन्तजाम हो गया है। सिर्फ एक राजा की कमी रह गई। राजा बनने वाला अगर कोई मिल जाता तो कितना अच्छा होता !" उस दल का मुखिया किसी से कह रहा था।

यह सुन कर राजा ने पूछा-"भाइयो! तुम लोग कौन सा नाटक खेलना चाहते हो । उसमें किस राजा की कथा है !"

तब उन लोगों का मुखिया बोला-"माई। एक कवि ने हमारे पुराने राजा गङ्ग के ऊपर एक सुन्दर नाटक लिखा है। नए राजा ने घोषणा की है कि जो लोग यह नाटक अच्छी तरह खेलेंगे उन्हें एक हजार अशर्फियाँ ईनाम में दी जाएँगी। हमने नाटक खेलने का इन्तजाम कर लिया है। लेकिन हमें पुराने राजा का भेष लेने वाला कोई नहीं मिल रहा है। बड़े अफसोस की बात है। नहीं तो हमें एक हजार अशर्फियाँ जरूर मिल जाती।"

तब राजा ने कहा-"तुम लोग सोच न करो। मैं नाटक करना जानता हूँ। मैं तुम्हारे पुराने राजा का वेष धारण करूँगा। मैं यह काम शौक से करूँगा। रुपए के लालच से नहीं। ईनाम में मुझे कोई हिस्सा नहीं चाहिए। अशर्फिया तुम्हीं लोग बाँट लेना !"

उसकी यह बात सुन कर उन लोगों की खुशी का ठिकाना न रहा। उनकी किस्मत कितनी अच्छी थी कि राजा के बेष के लिए आदमी भी मिल गया और वह कुछ लेगा भी नहीं !

"लेकिन मेरी एक शर्त है। मुझे राजा की पोशाक के अलावा एक घोड़ा और एक पैनी तलवार भी चाहिए। इनके बिना में नाटक न कर सकूँगा। कहो, मञ्जूर है न!" राजा गङ्ग ने कहा।

मुखिया ने झट उसकी बात मान ली और घोड़े और तलवार का इन्तजाम कर दिया। राजा ने अपना पाठ जल्दी ही याद कर लिया। मुखिया बहुत खुश हुआ।

पूनम की रात आई। राजा के किले में एक बड़ा रङ्गमञ्च तैयार कर दिया गया था। हजारों मशालें जल रहीं थी। चाँदी की मूठ वाले पंखे झले जा

रहे थे। एक बड़े सिंहासन पर बैठ कर, पान चबाते हुए राजा नाटक का आनन्द लूट रहा था।

नाटक शुरू हुआ। एक दो दृश्य हो गए। तीसरे दृश्य में नङ्गी तलवार हाथ लिए, घोड़े पर चढ़ कर जब राजा गङ्ग मञ्च पर आया तो चारों ओर सनसनी फैल गई। लोग कानाफूसी करने लगे कि "कही यह सचमुच राजा गङ्ग तो नहीं !" गद्दी पर बैठा राजा भी एकाएक घबरा गया। लेकिन पीछे उसने अपने मन को समझाया कि यह तो नाटक हो रहा है। धीरे-धीरे उसका सन्देह जाता रहा और उसे निश्चय हो गया कि यह

राजा गङ्ग नहीं हो सकता। वह तो कभी का मर गया होगा। अब जिन्दा भी हो तो यहाँ तक आने का दुस्साहस नहीं कर सकता। यह सोच कर वह निश्चिन्त हो गया और आराम से बैठ कर वह नाटक देखने लगा।

राजा ने अपना काम अच्छी तरह पूरा किया। लेकिन ज्यों ज्यों नाटक का अन्त नज़दीक आया त्यों त्यों उसके हृदय में साहस और पौरुष हिलौरें लेने लगे। वह भूल गया कि यह सिर्फ एक नाटक है। अन्त होते होते वह अचानक घोड़े से कूद पड़ा और नङ्गी तलवार उठाए सिंहासन पर बैठे हुए राजा की ओर झपट पड़ा। लोग मुँह बाए देखते रह गए। किसी के मुँह से कोई बात न निकली। उसने एक ही बार में आपने दुश्मन राजा का सिर काट लिया और स्वयं सिंहासन पर बैठ गया।

अब लोगों ने अपने पुराने राजा को पहचान लिया। वे सब हाथ जोड़ कर प्रणाम करने और जय-जयकार करने लगे। सिवाही पत्थर की मूरतों की तरह खड़े रह गए। सभी को खुशी हुई कि इतने दिन तक कष्ट उठा कर देश-विदेश भटकने के बाद उनका पुराना राजा अपने राज को लौट आया। जब लोगों की ऐसी दशा थी तो फि दुश्मन लोग क्या कर सकते थे ? जो लोग दुश्मनों के हिमायती थे वे जान बचा कर भाग गए।

अब राजा को किसी चीज का खटका न था। तब उसने मन ही मन भीमकवि का वचन याद किया और उसकी प्रशंसा की। उस समय से राजा कवियों को प्राण समान मानने लगा। जो कोई कवि उसके दरबार में जा जाता उसका यह खूब सत्कार करता।

रामपुर में बुधुआ नाम का एक गरीब लड़का रहता है। उसके माँ-बाप नहीं हैं। घर-बार और जमीन-जायदाद भी नहीं है। हर रेज़ वह किसी न किसी के घर जाता और दीन स्वर में कहता है-"माई, में गरीब लड़का हूँ। मूख से मरा जा रहा हूँ।"

यह सुन कर उस घर वालों को उस पर तरस आ जाता है। वे उसे पेट भर खिला देते हैं। जो अनाथ होता है उसके लिए 'बसुधैब कुटुम्बकम" यानी सारा संसार ही परिवार बन जाता है। इस तरह बुधुआ के दिन सुख से बीत रहे हैं। लेकिन "सबै दिन जात न एक समान।"

कुछ दिन बाद देश में अकाल पड़ता है और अन्य गाँवों की तरह रामपुर में भी राशन जारी हो जाता है। अब क्या धनवान और क्या गरीब, सभी भिखमङ्गों को खाली हाथ लौटाने लगते हैं।

यों बुधुआ पर बड़ी आफत आ पड़ती है। लेकिन वह है बड़ा चालाक। अपनी चतुरता के बल से वह किसी न किसी तरह अपना पेट भर लेता है। लेकिन एक दिन उसे कहीं कुछ नहीं मिलता है। वह भटकते-भटकते थक जाता है। शाम हो जाती है। यह सोचने लगता है-"भगवान! क्या आज भूखा ही सोना पड़ेगा ?" और सड़क पर चलने लगता है।

चलते चलते उसे जमीन पर एक पुर्जी पड़ी दिखाई देती है। दूर से लालटेन की धीमी रोशनी में देखने पर वह पुर्जी पाँच रुपए के नोट सी दीख पड़ती है। बुधुआ का दिल जोर से धड़कने लगता है और वह जाकर उसे लपक कर उठा लेता है। लेकिन वह एक खाली कागज निकलता है जिस पर कुछ लिखा हुआ है। "मेरा ऐसा भाग कहाँ जो पाँच रुपए का नोट पा जाऊँ ?" यह सोच कर बुधुआ उस पुर्जी को फेंक देना चाहता है।

लेकिन इतने में उसी राह से जाते हुए एक सज्जन यह देख कर पूछते हैं-"बच्चे ! क्या है वह !"

"मुझे मालूम नहीं। आप ही देखिए न, इस पर कुछ लिखा है !" यह कह कर बुधुआ पुर्जी उनके हाथ में दे देता है।

वे पढ़ कर कहते हैं-"यह दवा की पुर्जी है। बदहजमी की दवा लिखी है इस पर। खाना खाते ही यह दवा पीनी चाहिए। यह कहकर बुधुआ को देते हैं और चले जाते हैं।

"मुझ जैसे अभागे भूख से बेहाल हैं और इस पुर्जी वाले जैसे कुछ लोग बदहजमी से बेहाल हैं। दुनिया भी कैसी अजीब है!" यह सोचता बुधुआ कदम आगे बढ़ाता है। थोड़ी दूर जाने पर उसे एक घर दिखाई देता है। एक औरत मोजन करके पत्तल फेंकने आती है। उसे देख कर बुधुआ सोचता है-"यह औरत कुछ दयालु दीख पड़ती है। अगर मैं किसी उपाय से इसका दिल पिघलाऊँ तो यह जरूर कुछ खाना देगी।" यह सोच कर वह वहीं खड़ा हो जाता है और पुर्जी जेब से निकाल कर ध्यान से पढ़ने लगता है।

"बच्चे ! वह क्या है !" यह देख कर वह औरत पूछती है।

"दवा की पुर्जी है मैया ! मेरे पेट में जब शूल उठने लगा तो में डाक्टर के पास गया। उन्होंने मुझे यह पुर्जी लिख कर दी। लेकिन जब मैंने कहा कि मैं गरीब लड़का हूँ और मेरे पास दवा खरीदने के लिए पैसा नहीं है तो उन्होंने दवा भी दे दी। दवा तो उन्होंने दे दी। लेकिन अब मुझे अनुपान कहाँ से मिले ! डाक्टर साहब बड़े अच्छे आदमी हैं। शायद माँगने पर अनुपान भी दे देते। लेकिन मैं ही शरम के मारे उनसे कुछ न कह सका। लेकिन अब सोचता

हूँ कि बड़ी बेवकूफी की। गरीबों को शरमाने से कैसे काम चलेगा !" बुधुआ कहता है।

वह सरासर झूठ बोल जाता है। डाक्टर कौन है, वह कितना अच्छा आदमी है, यह स्वप्न में भी नहीं जानता वह। लेकिन पापी पेट जो न कराए सो थोड़ा। है न ?

"यह कौन-सी बड़ी बात है। अनुपान मैं दे दूँगी। वह दवा कैसे खाई जाती है। शहद के साथ कि दूध के साथ ?" वह औरत पूछती है।

तब बुधुआ वह पुर्जी उस औरत को दे देता है और कहता है-"तुम्ही पढ़ लो न। मुझे ठीक ठीक दिखाई नहीं देता।"

वह औरत पुर्जी लेकर पढ़ती है और कहती है-"यह दवा भोजन के बाद ही खानी चाहिए। कहाँ, इसमें अनुपान की बात तो कहीं लिखी नहीं है।"

बुधुआ झूठा जवाब देता है-"ठीक है मैया। भोजन ही अनुपान है। मैं आज सवेरे से इसी के लिए भटक रहा हूँ।"

वह औरत मुँह बाए खड़ी रह जाती है। एक क्षण के लिए उसके मन में होता है कि-"अच्छा! तुम्हारी चाल यह है ?" कह कर दरवाजा बन्द कर ले। लेकिन फिर सोचती है कि मैंने इसे अनुपान देने का वचन दिया है और यह लड़का भूखा है। बस, वह उसे अन्दर ले आकर पेट भर खिला देती है। वह सोचती है -खा-पीकर लड़का अपनी राह चल देगा। लेकिन नहीं, वह कहता है-"मैया! में बहुत थक गया हूँ। थोड़ी देर आराम करके चला जाऊँगा।" यह कह कर वह अङ्गोछा बिछाने लगता है।

"अच्छा! पर दवा पीना भूल न जाना!" यह औरत याद दिलाती है।

बुधुआ हँस कर कहता है-"माँ ! मेरी बीमारी तो भूख की बीमारी थी। वह पेट भर खाना खाते ही दूर हो गई। यह कह कर वह चला जाता है।

काशी नगरी में तिलोत्तमा नाम की एक युवती थी। छोटी उम्र में ही गान-बिद्या में उसने बहुत नाम प्राप्त कर लिया था। उसकी बडाई सुन कर नगर के राजा ने उसे अपने यहाँ बुलाया और खुश होकर अपनी लड़की चन्द्ररेखा को सङ्गीत सिखाने के लिए उसे रख लिया। चन्द्ररेखा और तिलोत्तमा की उमर करीब करीब बराबर थी। इसलिए दोनों में अच्छी दोस्ती जम गई। दोनों अब हमेशा एक साथ रहने लगी।

एक दिन राजा के मन में हुआ कि देखें, मेरी बिटिया ने कहाँ तक सङ्गीत सीखा है। इसलिए वह रनवास में आया। राजा के साथ रानी का भाई, चन्द्ररेखा का मामू वीरसेन भी वहाँ आया।

चन्द्ररेखा ने तिलोत्तमा से सीखे हुए कुछ गीत गा कर सुनाए। राजा बहुत खुश हुआ। वीरसेन भी खुश होता। लेकिन उसका सारा ध्यान तो तिलोत्तमा पर लगा हुआ था। उसके मन में किसी न किसी तरह तिलोत्तमा से व्याह करने की इच्छा हुई।

उस दिन से वीरसेन रनवास का चक्कर काटने लगा। वह रानी का भाई था। इसलिए कोई उसे कुछ कह न सकता था।

एक दिन तिलोत्तमा को अकेले में पाकर वीरसेन ने कहा-"सुन्दरी! तुम मुझ से व्याह कर लो। जो गहने-जेवर चाहोगी दूँगा।" परन्तु वीरसेन बड़ा ही बदसूरत और बेहूदा था।

इसलिए विशेषमा ने घृणा से इनकार कर दिया। पर वीरसेन हताश न हुआ। जाकर एक जङ्गली बुढ़िया से उसने जड़ी-बूटी खरीदी।

बुढ़िया ने समझा कर कहा- "बाबूजी ! यह जड़ी किसी तेल में घिस कर जिस किसी

के सिर में लगा दोगे, वह तुम्हारे ऊपर लट्टू हो जाएगी और जो कहोगे करने को तैयार रहेगी।"

जड़ी लेकर खुश होता बीरसेन घर आया। अमाबास की रात को छिपे छिपे वह तिलोत्तमा के कमरे में जा घुसा। उसने सोचा -"यह तेल सिर पर डालते ही तिलोत्तमा मेरे वश में हो जाएगी। इसलिए अगर वह जाग भी गई तो क्या हर्ज़ है !" इस विश्वास से वह मूरख तिलोत्तमा के सिर पर तेल लगाने लगा।

सिर पर हाथ रखते ही तिलोत्तमा जाग पड़ी और "चोर ! चोर !" कह कर चिल्लाने लगी। चन्द्ररेखा बगल के कमरे में ही सो रही थी। घबरा कर उठी और वह भी "चोर ! चोर !" चिल्लाने लगी।

बीरसेन उछला और गिरता पड़ता वहाँ से भाग गया। ऐसी फजीहत उठाने पर भी वीरसेन का मोह न टूटा। उसने दो-तीन दिन चुपचाप राह देखी। सोचता रहा-"तेल का असर पीरे-धीरे होगा और तिलोत्तमा जरूर मेरी बनेगी।"

दो-तीन दिन के बाद उसने रनवास के इर्द-गिर्द फिर चक्कर काटना शुरू किया। लेकिन कोई फायदा न
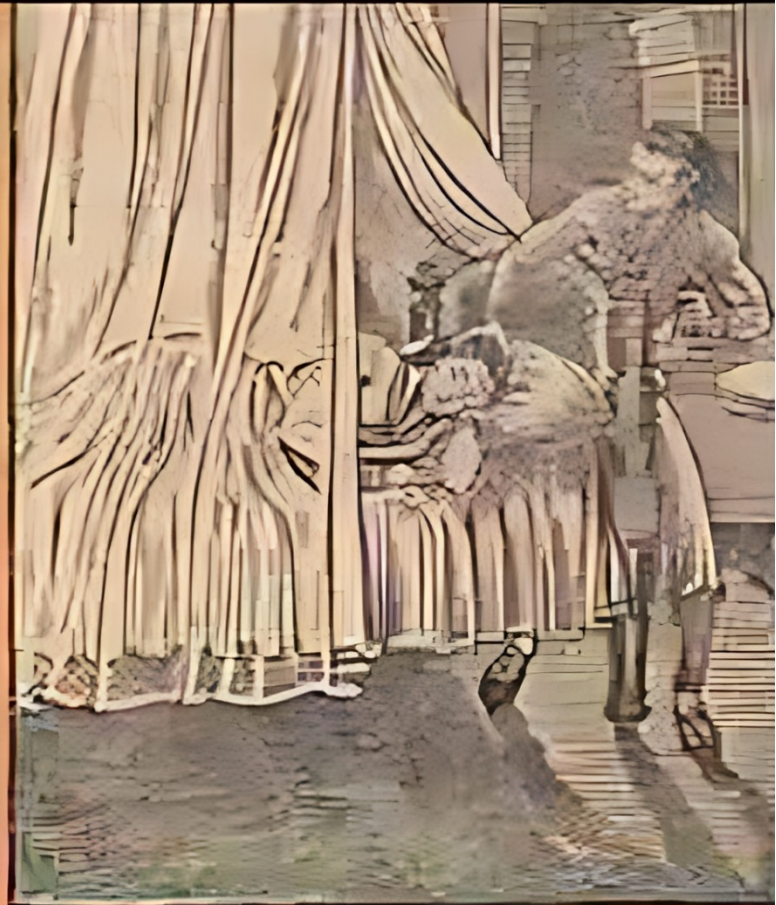
हुआ। अब उसे मालूम हुआ कि बुढ़िया ने उसे खूब चकमा दिया है।

तब वीरसेन ने गुण्डों के जरिए तिलोत्तमा को उड़ा ले जाने की एक तरकीब सोची।

कुछ दिन बाद तिलोत्तमा और चन्द्ररेखा सखी-सहेलियों के साथ नगर से थोड़ी दूर पर राज-उपवन में चली गई।

बीरसेन के लगाए हुए बदमाश तिलोत्तमा के ऊपर सतर्क दृष्टि रखे हुए थे। वे पहले ही जाकर उपवन में छिप बैठे। जब रात हुई और सब लोग सो रहे थे, तब वे गुण्डे राजकुमारी के घर में घुस गए। उन्होंने दिन में ही

तिलोत्तमा की साड़ी की शिनाख्त कर ली थी। इसलिए वे मद्धिम रेशनी में उस साड़ी को पहचान कर सावधानी से उस खाट को उठा कर ले गए और वीरसेन के सामने रख कर बोले -"लीजिए। हमें अब ईनाम इकराम का जो वादा किया था, दीजिए !"

"देता हूँ! देता हूँ!" कह कर खुशी से उछलते हुए वीरसेन ने उस खाट पर सोती हुई लड़की के पास जाकर देखा। लेकिन यह क्या ! वह निलोत्तमा नहीं थी। यह तो उसकी भांजी चन्द्ररेखा थी।

"बेवकूफो! इसे क्यों उठा लाए हो। जाओ! इसे फिर सावधानी से उठा ले जाओ और जहाँ से लाए हो वहीं रख आओ।" उसने उनको कोसते हुए कहा।

लाचार होकर गुण्डे फिर खाट उठा कर उपवन की ओर चले। लेकिन इतने में उन्हें पहरेदारों की आहट सुनाई दी। बस, डर के मारे वे जान बचा कर जङ्गल की तरफ भाग गए। वहाँ जाकर उन्होंने सोचा -"हमारी मेहनत क्यों बेकार जाए ?" इसलिए उन्होंने चन्द्ररेखा के सारे गहने छीन लिए और उसे वहीं रोती छोड़ कर भाग गए।

सबेरा होते ही सारे शहर में बिजली की तरह खबर फैल गई कि राजकुमारी लापता हो गई। राजा और रानी घबरा कर उपवन की ओर दौड़े। वीरसेन भी साथ गया । तिलोत्तमा को नीचा दिखाने का उसे और एक उपाय सुझ गया। जब सब लोग तिलोत्तमा से पूछने लगे कि "चन्द्ररेखा कहाँ गई" तो उसने दाँत पीस कर कहा-"और कहाँ जाएगी ? इसी विश्वास-घातिनी ने गहनों के लालच से उसे मार डाला होगा। अगर आप लोगों को विश्वास न हो तो पूछेए, किसकी साड़ी पहने हुए है यह ?"

tब रानी ने कहा-"हाँ, हाँ ! यह साड़ी तो राजकुमारी ही की है। तिलोत्तमा ! तुम्हें यह साड़ी कैसे मिल गई ?"

तब तिलोत्तमा ने जवाब दिया-"कल हम सभी जब सरोवर में नहाने गई, तो चन्द्ररेखा पहले ऊपर आ गई। उसने भूल से अपनी साड़ी के बदले मेरी साड़ी पहन ली। जब मैंने उसे इसका ध्यान दिलाया तो उसने कहा-'अच्छा; तुम मेरी साड़ी पहन लो। अब फिर क्या बदलूँ ?' लाचार होकर मुझे उसकी साड़ी पहननी पड़ी।"

"यह सरासर झूठ बोल रही है।" वीरसेन ने कहा! उसने तिलोत्तमा पर और भी बहुत से झूठ-मूठ के दोष लगाए। राजा-रानी को कुछ न सूझा कि क्या करें। बीरसेन ने यह मौका देख कर सारी जिम्मेदारी अपने ऊस ले ली और सिपाहियों से कहा-"जाओ। इस हत्यारिन को हमारी आँखों के सामने से ले जाकर जङ्गल में नदी के उस पार ले जाकर छोड़ आओ !"

यह हुक्म सुनते ही सिपाही लोग तिलोत्तमा को वहाँ ले जाकर छोड़ गए।

"यह क्या हुआ ! यह झूठ-मूठ का अपराध मेरे सिर मढ़ दिया गया। भगवन !" यह सोचकर तिलोत्तमा रोने लगी।

इतने में बरसेन ने उसके सामने जा कर, खड़े होकर हँसते हुए कहा- "तिलोत्तमा । तुम बिलकुल फिक्र न करो। मैने तुमसे मिलने के लिए ही यह चाल चली है। अब तुम मुझसे ब्याह कर लो। फिर तुम्हें किसी चीज़ की कमी न रहेगी।"

यह सुन कर तिलोतमा के घावों पर नमक पड़ गया। वह आग-बबूला होकर उसे कोसने लगी।

तब वीरसेन ने कहा- "अपनी जवान को काबू में करो तिलोत्तमा। मेरी बात ध्यान

से सुनो। लड़की के शोक में जल्द ही राजा पागल हो जाएँगे। तब यह सारा राज मेरे हाथ आ जाएगा। अगर तुम मुझसे ब्याह करोगी तो घर बैठे रानी बन जाओगी। बोलो ! मञ्जूर है ?" यह यों कह ही रहा था कि इतने में कहीं से सनसनाता हुआ एक तीर आया और उसकी छाती में लगा। "हाय! हाय!" कह कर जमीन पर गिर पड़ा और मर गया। थोड़ी देर में एक बूढ़े भील ने वहाँ आकर कहा-"हाय ! तो मैंने एक आदमी को मार डाला ? मैंने दूर से इसे देख कर कोई जङ्गली जानवर समझा और अपने तीर का शिकार बनाया।"

"तुमने बहुत अच्छा किया दादा ! यह एक जानवर से भी बदतर था।" यह कह कर तिलोत्तमा ने अपना सारा हाल कह सुनाया। तब वह भी उसे धीरज देकर अपनी झोपड़ा की ओर ले जाने लगा। थोड़ी दूर जाने पर उन्हें कहीं से आर्तनाद सुनाई दिया-"हाय! मुझे मार न डालो! मैं तुम्हें सची बात बता दूँगा।"

जब वे नजदीक आ गए तो देखा कि राजा के सिपाही जो तिलोत्तमा को जङ्गल में छोड़ गए थे, एक आदमी को पेड़ से बाँध कर धमका रहे हैं। तिलोत्तमा आश्चर्य से वहीं खड़ी रह गई। क्योंकि पेड़ से बन्धे हुए आदमी के कहने से मालूम हुआ कि वह राजकुमारी को उठा लाने वालों में से एक था। यह जान कर तिलोत्तमा ने उसके बन्धन खुलवा कर कहा-"चलो ! मुझे वह जगह दिखा दो जहाँ तुम राजकुमारी को छोड़ आए।" तब उस गुण्डे ने उसे वह जगह दिखा दी। तिलोत्तमा को देखते ही राजकुमारी ने उसे आनन्द से गले लगा लिया। वीरसेन के अत्याचारों का वर्णन करती हुई दोनों महल को लौट गई।
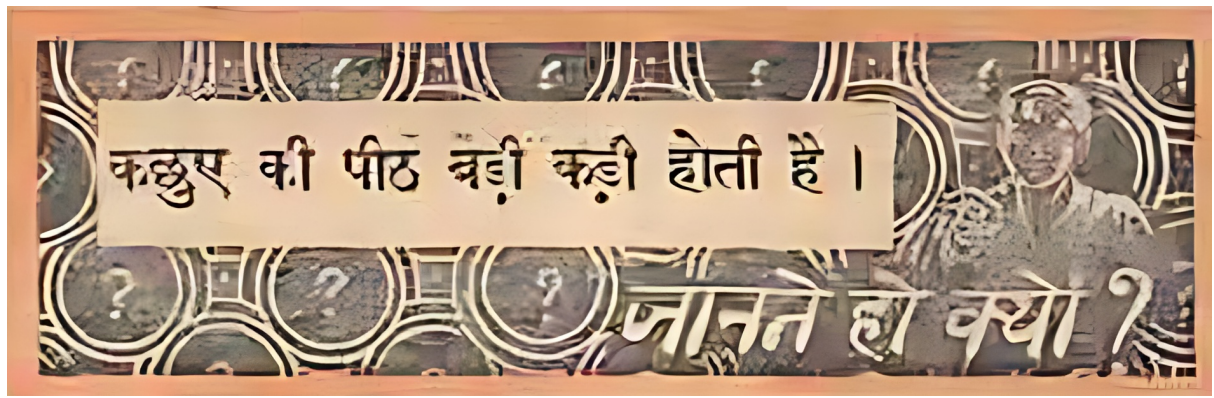
सब तरह के जीव-जन्तुओं की सृष्टि के बाद शरीर के एकाध भाग जो बच रहे उन्हीं के मिश्रण से कछुआ तैयार हुआ। इसी से उसके आगे के पैर एक तरह के है और पिछले पैर दूसरी तरह के। सिर तो साँप जैसा है। इस तरह शरीर के एक अङ्ग से दूसरे अङ्ग का सम्बन्ध जुटता नहीं। अपना बदसूरती देख कर कछुए ने ब्रम्हा से कहा-"देव! यह रूप लेकर में अन्य जीवों के बीच कैसे जाऊँ !" उसने अपना असन्तोष प्रकट किया।

तब ब्रह्मा ने कहा- तुम रूप की चिन्ता न करो! जीब में गुण ही प्रधान होता है, रूप नहीं। बेखटके जिन्दगी बिताने के लिए गुणों की ही जरूरत होती है। जाओ, मैं तुम्हें कुछ ऐसी शक्तियाँ देता हूँ तो किसी प्राणी में नहीं है। तुम जल और थल कहीं भी रहो, निश्चिन्त घूमो-फिरो। में तुम्हें पानी को साफ करने की शक्ति भी देता हूँ। इसके बल पर तुम मनुष्य का बहुत उपकार कर सकोगे।" इस तरह उसे समझा भेजा।

थोड़े दिन बाद एक गिरगिट कछुए के पास पहुँचा। वह उसे देखते ही खिलखिला पड़ा -"वाह! वाह! क्या सुरत मिली है तुमको। क्या मैं जान सकता हूँ कि श्रीमान का नाम क्या है !"

यह सुन कर कछुए को क्रोध आया। उसने कहा -"मुझे कछुआ कहते हैं। तुम सिर्फ मेरी सूरत देख कर हँस रहे हो! मेरे गुण तुम नहीं जानते। मैं पानी और जमीन पर एक समान रह सकता हूँ। बताओ ऐसा कोई दूसरा कर सकता है ? और सुनो, में पानी को साफ भी कर सकता हूँ। मनुष्य के लिए पानी कितना जरूरी है, तुम जानते ही हो। मनुष्य मुझे कितना प्यार करता है यह तुम्हें नहीं मालूम।" उसने अपनी डीङ्ग हाँकी।

यह सुन कर गिरगिट "बहुत अच्छा! बहुत अच्छा!" कह कर अपनी राह जाने लगा। थोड़ी दूर जाने पर उसे एक आदमी दिखाई दिया। उसे देख कर गिरगिट ने पूछा-"क्यों महाशय ! हमने सुना है कि आपको कछुए से बड़ा प्रेम है। भला बताइए तो आप लोग क्यों उससे इतना प्यार करते है !"

"वह हमारे कुँओं का पानी साफ रखता है। इसके अलावा उसका मांस भी खाने में बहुत अच्छा होता है।" उस गादमी ने जवाब दिया।

"तो यह बात है।" यह कह कर गिरगिट चला गया और उसने जाकर यह बात सभी प्राणियों से कह दी। उस दिन से जहाँ कहाँ कछुआ दिखाई देता सभी जीव उसे चिढ़ाने लगते। कछुआ परेशान हो गया ।

इस तरह कुछ दिन बीत गए। एक रोज गिरगिट खामख्वाह कछुए के पास गया और बोला-"उस दिन तो तुमने खूब डीङ्ग हाँकी थी। अब बताओ! क्या हाल है तुम्हारा !"

"मैंने तुमसे झूठ तो कहा नहीं था। न जाने क्यों लोग मुझे ताने मारते हैं।" कछुए ने रोनी सूरत बना कर कहा। इतने में वह गिरगिट गायब हो गया और उसके बदले ब्रह्माजी प्रत्यक्ष हुए। "कूर्मराज! तुमने खुद डीङ्ग हाँक कर अपने ऊपर यह आफत बुलाई है। तुम्हारे गर्व के कारण तुम्हारी जाति नष्ट होने जा रही है।" ब्रह्मा ने कहा।

तब कछुए ने माफी माँगते हुए कहा-"देव! मुझसे अनजान में चूक हो गई। मुझे इसका दण्ड भी मिल गया। इसके अलावा मेरे अपराध के कारण सारी जाति को दण्ड देना भी उचित नहीं। इसलिए कोई उपाय सुझाइए।" कछुआ बहुत गिड़गिड़ाया।

तब ब्रह्मा को उस पर तरस आया। उसने कृपा करके कछुए को ऐसी पीठ दी जो इस्पात से भी मजबूत थी।